Impact Factor 2.147

ISSN 2349-638x

Refereed And Indexed Journal

AAYUSHI INTERNATIONAL INTERDISCIPLINARY RESEARCH JOURNAL (AIIRJ)

Monthly Publish Journal

VOL-III ISSUE-IX Sept. 2016

Address
•Vikram Nagar, Boudhi Chouk, Latur.
•Tq. Latur, Dis. Latur 413512
•(+91) 9922455749, (+91) 9158387437

Email
•aiirjpramod@gmail.com

Website
•www.aiirjournal.com

CHIEF EDITOR – PRAMOD PRAKASHRAO TANDALE

कला: समाज का दर्पण

Sudhir Kumar
Assistant Professor
Dav College Of Education,Abohar

कला ही जीवन है जीवन ही कला है'' अर्थात कला का दूसरा नाम जीवन है।

मनुष्य अपने आंतरिक भावों तथा विचारों को जिस माध्यम द्वारा व्यक्त करता है उसे 'कला' या 'सृजनात्मक कला' कहते हैं। चाहे हम एक ही विश्व निर्माता द्वारा बनाए गये है। भगवान सम्पूर्ण सृष्टि का निर्माता है। कला की दृष्टि से भगवान ने समस्त संसार का निर्माण किया है। संसार में पाए जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति में बुद्धि एक ऐसा तत्व है जो कि बाकी जीवो की उपेक्षा विभिन्न है। मानव अपनी बुद्धि का सदुपयोग करके अपने जीवन को सरल तथा सौन्दर्यपूर्ण बना सकता है। भगवान ने सबमे कुछ न कुछ सृजनात्मक शक्तियॉ पाई हैं। परंतु इन सृजनात्मक शक्तियों की मात्रा सभी व्यक्तियों में समान नहीं होती। प्रत्येक व्यक्ति की सृजनात्मकता भी अलग–अलग क्षेत्रों में हुआ करती है। जैसे–महात्मा गांधी, इब्राहिम लिंकन, अमृता शेरगिल, रविन्द्र नाथ टैगोर, न्यूटन, तानसेन तथा शेक्सपीयर आदि सबने किसी न किसी क्षेत्र में मुहारत हासिल की।

कला जीवन को सार्थकता, दिशा और ज्योति प्रदान करती है। मानव की प्रवृत्ति सदैव से रचनात्मक रही है। कला के सौन्दर्य का रसास्वादन भी मानव प्रारम्भ से करता रहा है। इस प्रकार मानव के जीवन में कला का विशेष महत्व है। कला जीवन के आरम्भ से लेकर अन्त तक मानव और उसके क्रियाकलापों को शोभित करती है। जीवन का शायद ही कोई ऐसा पहलू हो जो कला ने अपने स्पर्श से पवित्र न किया हो। कला मानव की सभ्यता और विकास की परिचायक है। जिस देश में कला अधिक विकसित होगी वह देश भी उतना ही विकसित कहलाएगा।

शिशु के जन्म से मरण तक कला का महत्व भारतीय सांस्कृति में विशेष रूप से चला आ रहा है। रीति रिवाजों, त्यौहारों, उत्सवों, मेलों तथा विशेष प्रोग्रामों में विभिन्न चित्रकारी, कलाकृतियॉं, नाच, गान, संगीत तथा पहरावा आदि में कला की चमक के नूमने मिलते हैं। कला के अभाव से जीवन, शिक्षा तथा सांस्कृति का स्तर ऊॅचा नहीं हो सकता। कला जीवन में संतोष प्राप्ति का एक साधन है।

आदिकाल से कला मानव की संगिनी रही है। मानव के विकास के साथ ही कला का भी विकास हुआ। कला मानव हृदय को आकृत कर उसे अपनी ओर सहज आकर्षिक कर लेती है। मानव के भावों के प्रकाश में विभिन्न कलाऍं माध्यम का कार्य करती हैं। कला का क्षेत्र असीमित हैं। कला मानव जीवन के अनेक पहलुओं को व्यक्त करने का साधन है। कला आत्मा को परामत्मा से मिलाती है। प्रकृति के सौन्दर्य से प्रेरणा ग्रहण करके मानव अपनी भावों की अभिव्यक्ति करता है। सभी व्यक्ति अपनी भाव अभिव्यक्ति चाहते हैं किंतु कुछ व्यक्ति ही इस कार्य में सफल होते हैं और कलाकार कहलाते हैं।

कलाकार का व्यक्तित्व समाज से ही निर्मित है। कलाकार समाज में ही जन्म लेता है समाज के किसी वर्ग विशेष की भाषा सीखता है और जैसी भाषा वह सीखता है उसी में स्वयं को व्यक्त करता है। इस प्रकार कलाकार समाज की ही एक इकाई है जैसा कि अरस्तु ने भी कहा है ''मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो समाज मे रहता है वह या तो देव है या दानव।''

कलाकार जन्मपूर्व से लेकर मृत्युपर्यन्त समाज से जुड़ा है। अतः दोनों के एकीकरण से ही जीवन गतिशील है। समाज की अनेक परम्परओं, रूढियों, गतिविधियों, ऐतिहासिक तथ्यों, आध्यात्मिक आदि रूपों को कलाकार अपनी मौलिक तथा अतिरिक्त सृजन शक्ति से सुंदर कलाकृति के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उसकी

मूल प्रवृत्तियाँ सामाजिक वातावरण के अनुसार विकसित होती हैं। कलाकार की किसी विशेषता के कारण अद्भुत सौन्दर्य का जन्म होता है।

कलाकार जिस युग में पैदा होता है उस युग के प्रभावो में स्वयं ही झांकने लगता है। चाहकर भी कलाकार अपने समय के प्रभाव से मुक्त नहीं रह सकता क्योंकि कलाकार का निर्माण उसके युग की परिस्थितियों के अनुरूप होता है और कला सदैव भाव अभिव्यंजना का परिणाम होती है। अतः कला ही किसी देश की सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्थिति का दर्पण है।

कला की प्रकृति सामाजिक है इस विषय में टाल्साय ने इस प्रकार लिखा है– ''कोई वास्तविक कला नहीं है, जब तक उसका निर्माणकर्त्ता अनुभव के अनुसार बिम्ब विकसित नहीं करता है। जिसके लिए पर्यावरण की बहुत आवश्यकता पड़ती है। पर्यावरण से तात्पर्य सामाजिक वातावरण से है। इस प्रकार समाज कलाकार को जन्म देता है और वह विभिन्न अनुभवों से कला रचना करता है। कला कोमल भावों के द्वारा समाज में सुन्दरता प्रदान करती है यदि नाचना हो तो शारीरिक सजावट, वस्त्रों की सजावट करता है इस तरह से समाज में सुन्दरता का ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया जाता है उसके साथ प्यार करना सीखा जाता है। इसी रूचियों से कलाओं का विकास होता है। इसके साथ ही सृजनात्मक रूचियों का विकास होता है।

मनुष्य कला के द्वारा व्यक्तिगत भावों की कोमलता को दर्शाता है। पहनावें, गीत, लोक गीत, लोक गाथायें पीढ़ी दर पीढ़ी चलती हैं। संगीत कवितायें, कवि, देवी देवता के साथ सम्बंध पीढ़ी दर पीढ़ी बदले हैं। पुरानी वस्तुएँ, पुरानी मन्दिर, धार्मिक संस्थायें, अजंता, ऐलोरा की गुफाओं, जैन व बोदी मन्दिर यह वस्तुयें संभाल कर रखी हैं। पुराने चित्र, संगीत की साज, नाच से सम्बंधित पोशाक, पहनावे आदि अजायब घर में संभाल कर रखे हुये हैं। कोमल कलाओं से मनुष्य के भावानाओं का पता चलता है। जब कलाकार किसी से दिल की बात करता है या प्यार की बात करता है तो नौजवान झूम उठते हैं और उन्हें एक आनन्द और रस का स्त्रोत दिखाई देता है। जब कभी लोगों को देश प्यार के लिए अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए तैयार करना हो तो गीत, नाटक के द्वारा लोगों का उत्साहित रूप से तैयार किया जाता है। इन भावों को प्रभावित करने के लिए समाज एक अच्छी भूमिका निभाता है। चित्रकार बुराइयों को दूर करने के लिए चित्र चित्रित करता है और पोस्टर बनाता है जैसे–शराब, दहेज, लड़की को जलाना, अनपढ़ता, नशे का इस्तेमाल वाली समस्यायें के सम्बंधित चित्र चित्रित करता है। राजनीति में भी भ्रष्टाचार गलत नीतियाँ को कलाकार विषय में झलकाता है।

सभ्याचार समाज में रीति रिवाज, लोक–गीत, पहनावा, मनोरंजन का दंग व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक चलता है। कला आनन्द मनाने के लिए जाति पाति या अमीर गरीब का भेद–भाव नहीं होता। जब बचपन में बालक बाल पड़ावों को पार करता है तो उसे अपने सभ्याचार की जानकारी होती है। वह बालक बड़ा होकर इस सभ्याचार के द्वारा ही अपनी जिन्दगी को जीना चाहता है। भंगड़ा, गिद्दा, जागो, नाचना, गाना, पहनावा, शिंगार सब सभ्याचार का महत्त्वपूर्ण अंग है। जब सामाजिक त्यौहार, इकट्ठे मनाये जाते हैं तो ऐसे मौके पर गरीब, अमीर, जाति–पाति का भेदभाव नहीं होता। दीवाली , दशहरा, गुरूओं का जन्म दिवस मनाना, झगड़ा, नाटक, आदि सब भेद–भाव को दूर करती है। इस तरह कोमल कलायें व्यक्तियों को एक दूसरे के नजदीक लाते हैं।

सहायक ग्रंथ सूची

- http://www.artscouncil.org.uk/exploring-value-arts-and-culture/value-arts-and-culture-people-and-society
- Iyer K. Bharatha, Language of Indian Art, *Indian Art - A short introduction,* **1st Ed.**,9-13, **(1982)**.
- Subramaniam K.G., *The Indian artist and the socio cultural context*, Moving Focus, Lalit Kala Academy, New Delhi, 38-45,**(1978)**.
- Pandey A., Kala, sanskriti evam prateek, J. *Shodha-Samveta,* **xv**, 88-92, (**2006-07)**.
- http://www.ismatimes.com/tag/rajasthan-lalit-kala-academy/